B-1

कालीदास

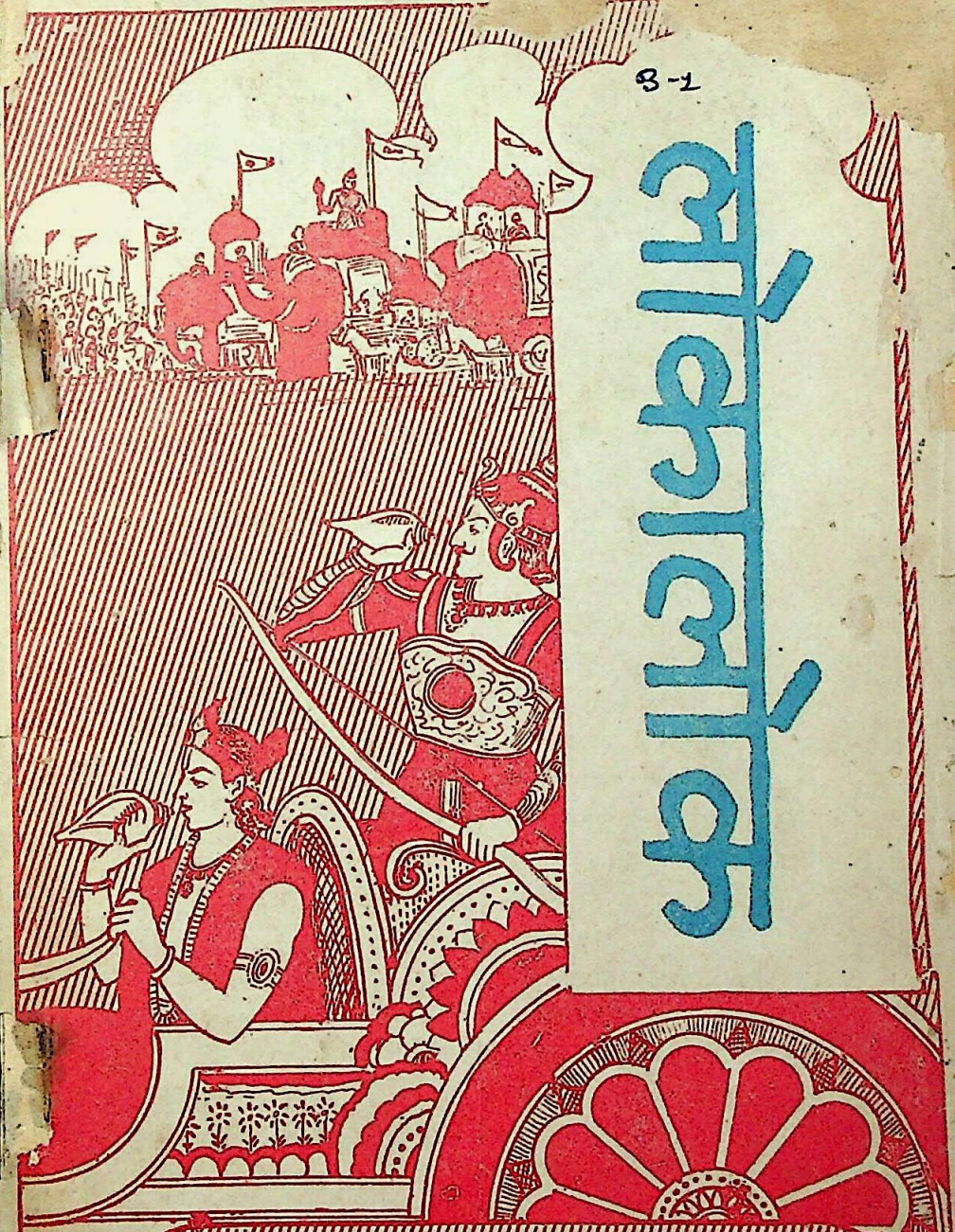

माधव पुस्तकालय
१०३, A, कमला नगर, देहली

भारतीय संस्कृति के अग्रदूत

'लोकालोक' के उद्देश्य तथा नियम

उद्देश्य—अनादि अनन्त, सनातन धर्म के सार्वकालिक, सार्वजनीन, प्राणिमात्र के हितकारक सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार।

नियम—(१) लोकालोक का नवीन वर्ष नवसंवत्सरारम्भ (चैत्र) से प्रारम्भ होकर फाल्गुन पूर्णिमा पर्यन्त रहता है।

(२) प्रतिमास अंग्रेजी मास की दस तारीख को अंक भेजा जाता है।

(३) यदि मास की २५ तारीख तक भी अंक न मिले तो अपने पोस्ट पोस्ट आफिस में जानकरी करके कार्यालय को तुरन्त सूचना दी जाय, जिससे अङ्क पुनः भेजा सके।

(४) दो रुपये का डाक टिकट भेजने पर नमूने की प्रति भेजी जा सकती है।

(५) वी. पी भेजने का नियम नहीं है। प्रायः अग्रिम वार्षिक मूल्य प्राप्त होने पर ही ग्राहक बनाये जाते हैं।

(६) पत्र का वार्षिक मूल्य देश में १५) विदेश में समुद्री डाक से ६०) तथा वायुयान से भेजने पर १००) है। आजीवन सदस्यता शुल्य भारत में २५१ है।

(७) प्रकाशित रचनाओं पर पारिश्रमिक की व्यवस्था नहीं है। रचनाओं-में अपेक्षित संशोधन का अधिकार सम्पादक को होगा। प्रकाशित मत के लिये लेखक ही उत्तरदायी होगा।

(८) पत्र के कम से कम दस साधारण सदस्य बनाने वाले महानुभावों को एक वर्ष पर्यन्त पत्र निःशुल्क मेजा जाता है।

सदस्यता के प्रकार तथा नियम

१ पन्द्रह रुपये प्रदान करने वाले उस वर्ष के 'साधारण सदस्य' होंगे।

२. इक्यावन रुपये प्रदान करने वाले उस वर्ष के 'विशिष्ट सदस्य' होंगे।

३. दो सौ इक्यावन रुपये प्रदान करने वाले 'आजीवन सदस्य' होंगे।

४. पांच सौ रुपये प्रदान करने वाले 'विशिष्ट सहयोगी सदस्य' होंगे।

५. ग्यारह सौ रुपये प्रदान करने वाले 'संरक्षक सदस्य' होंगे।

विशेष—प्रधान संरक्षक का पद पत्र का सम्पूर्ण भार वहन करने वाले महानुभावों, बीत राग तपस्वियों तथा उच्चकोटि के तत्त्वदर्शी विद्वानों एवं सन्तों के लिये सुरक्षित हैं।

पत्र व्यवहार का एकमात्र पता—

'लोकालोक' (मासिक), माधव पुस्तकालय १०३-ए, कमला नगर

दिल्ली-११०००७

॥ श्रीहरिः ॥

लोकालोक

[संस्थापक—शास्त्रार्थमहारथी श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्री]

लोकानालोकयन् दीप्त्या द्विजान् कुर्वन् वितन्द्रितान् ।
लोकालोकोऽयमुदितो दिवान्धान् धर्षयन् रुचा ॥

दूरभाष : २५२४३२५

वर्ष २४] कमलानगर-दिल्ली, मार्गशीर्ष : २०४१ [अंक ९

❀ वेदामृत

ऐसी हो आशीष

यद् अग्ने ! स्यामहं त्वं त्वं वा घा स्या अहम् ।
स्युष्टे सत्या इहाशिषः ॥ (ऋग्वेद ८।४४।२३)

भावानुवाद:

अशरणशरण ! अकारुणकरुणावरुणालय, श्रीमन्नारायण !
तव अनुपम महिमा-गाथा का करें सदा हम पारायण ।
जगद्विधाता, हे जगपालक ! निखिल जगत् में तू ही व्याप्त,
तेरी अनुकम्पा से हमको ज्ञान-विभव सब होता प्राप्त ।
बिन्दु-सिन्धु में ज्यों मिल जाता ऐसे तुम को पाऊँ
'तुम' 'मैं' हो बन रहो और 'मैं' भी 'तुम' अब बन जाऊँ ।
सुगम मार्ग मिल जाये ऐसा चलूँ और पा जाऊँ तुमको,
हृदय-कमल पर तुम्हीं विराजो परम देव ! मैं ध्याऊँ तुमको ।
ऐसी दो आशीष दयालो ! कर्मशील हो जाये जीवन,
शिवतम-संकल्पों के द्वारा लक्ष्य अटल पा जाये जीवन ॥

—डा० वीराचार्य शास्त्री

॥ श्रीहरिः ॥ दूरभाष : २५२४३२१

लोकालोक

संस्थापक—शास्त्रार्थमहारथी श्री पं० माधवाचार्य शास्त्री

संरक्षक :—आचार्य श्रीकण्ठ शास्त्री (आद्य सम्पादक)

० दिसम्बर १९८४ ०

सम्पादक :—	प्रकाशन सहयोगी :	सह सम्पादक :
वीराचार्य शास्त्री	सतीश कौशिक	प्रेमाचार्य शास्त्री
व्यवस्थापक :	ब्रजेश, शैलेश	सह प्रबन्धक
अरुणेश कौशिक	प्रचार : हरीश शास्त्री	लोकेशाचार्य

विषय सूची

लेख	लेखक	पृष्ठ
वेदामृत (कविता)	डा. वीराचार्य शास्त्री	१
सम्पादकीय	,,	३
क्यों (पूर्वार्द्ध)	श्री शास्त्रार्थ महारथी जी	५
शोकोद्गार (कविता)	,, विमलेश जी शास्त्री	६
गीता की प्रामाण्य मीमांसा	डा. भीष्मदत्त जी शर्मा	७
श्रीराम कथा लेखक पवन पुत्र	श्री सुदर्शन सिंह जी 'चक्र'	१२
कैकेयी का अन्तर्द्वन्द्व (कविता)	,, पं० सुरेश जी शर्मा	१५
मन्त्र का वैज्ञानिक महत्व	,, अशोक कुमार जी	१६
नक्षत्र कहते हैं ..	डा. केदारनाथ जी जगता	१९
नल दमयन्ती (कविता)	श्री शिवनारायण जी सक्सैना	२१
शरीर तत्त्व विवेचन	श्री पं. रामस्वरूप जी शास्त्री	२२
देववाणी रसामृतम्	डा. सूर्य प्रसाद जी मिश्र	२४
विसंगत इतिहास कब तक पढ़ेंगे	डा. यशपाल जी शास्त्री	२५
राजनीति-वर्णन	श्री भोलादत्त जी ध्यानी	२८
सरिता के कुतर्कों का उत्तर	श्री रामचन्द्र जी शास्त्री रामायणी	२९
धार्मिक-समाचार	——	३१

मानवता से विश्वासघात

क्या कहूँ कुछ कहा नहीं जाता।
हाय ! चुप भी रहा नहीं जाता ।।

श्रीमती इन्दिरा गान्धी की नृशंस हत्या से सारा विश्व चकित रह गया। मानवता के प्रति विश्वासघात की अपने ढंग की यह परम घृणास्पद घटना है। रक्षकों ने भक्षक बन कर भारतीय इतिहास को कलंकित कर डाला। विरोधियों-की हत्याओं का भारतीय संस्कृति में कभी समर्थन नहीं किया गया, और न ही-राजनैतिक समस्याओं का समाधान हिंसा में खोजा गया। 'मा हिंस्यात् सर्वा-भूतानि' का श्रुतिवाच्य यहाँ सिद्धान्त एवं व्यवहार में मान्य रहा है। वैचारिक मतभेदों का हल हिंसा से नहीं होता। फिर भी हिंसा की पिशाचिनी अपनी वज्रदंष्ट्रा फैलाये निरपराध प्राणियों को अपना ग्रास बनाती रहती है। इस अमानवीय हिंसा की घिनौनी घटना ने सनातन धर्म की उस मान्यता को पुनः पुष्ट किया है कि पारलौकिक व्यवस्थाओं में तथा पारलौकिक साधना के क्षेत्र में तो श्रीमन्नारायण पर सर्वात्मना विश्वास और भगवत्-शरणागति पर पूरा भरोसा आवश्यक है, किन्तु लौकिक व्यवहार में अति विश्वास घातक बन जाता है। व्यावहारिक दृष्टि से भी और राजनैतिक दृष्टि से भी विश्वास की एक सीमा होती है। धर्मशास्त्र का वचन है—

न विश्वसेदविश्वस्ते विश्वस्ते नाति विश्वसेत्।
विश्वासाद् भयमाप्नोति मूलान्यपि निकृन्तति ।।

अर्थात् विश्वास न करने योग्य व्यक्ति का कभी विश्वास न करे और विश्वस्त व्यक्ति का अतिविश्वास न करे। अतिविश्वास करने पर स्वार्थी व्यक्ति जड़मूल पर ही कुठाराघात कर बैठता है। श्रीमती इन्दिरा गान्धी का अतिविश्वास-अपने अङ्गरक्षकों पर अतिविश्वास उनके वर्चस्वी जीवन को ग्रस गया। इस हत्याकाण्ड के पीछे किनका हाथ है ? कौन हैं इस निर्मम नृशंस मरण का षड्यन्त्र रचने वाले ? आदि प्रश्नों का उत्तर तो जाँच आयोग के अधिकारी खोजने में संलग्न हैं। हम तो इतना कह सकते हैं—

खुद बखुद आग नशेमन में नहीं लग सकती।
कौन कहता है चमन में मेरे सैयाद नहीं ॥

पृथ्वी ऐसे विश्वासघातियों को न जाने कैसे धारण कर पाती है—

उपकारिणि विश्रब्धे शुद्धमतौ यः समाचरति पापम्।
तं जनमसत्यसन्धम्भगवति वसुधे कथं वहति ? ॥

अघटित घटना पठीयसी महीयसी माया के नियामक परम पिता परमेश्वर के चरणों में प्रार्थना है कि वे अपनी लीलाभूमि भारत को मानवीय गरिमा से युक्त बनायें और सद्बुद्धि प्रदान करें ऐसे दिग्भ्रमितों को जो इस मातृभूमि की सन्तति होकर भी जाने अनजाने परकीय हाथों की क्रीड़ा-पुत्तलिका बन रहे हैं। 回

डा० वीराचार्य शास्त्री

आवश्यक सूचना

पाठकों को सहर्ष सूचित किया जाता है कि 'सरिता के कुतर्कों का उत्तर' स्तम्भ के लेखों का पुस्तक रूप में प्रकाशन किया जा चुका है। प्रकाशन में कम से कम १०१) रुपये सहयोग देने वाले महानुभावों का पुस्तक में विधिवत् धन्यवाद सहित नाम प्रकाशित किया जा रहा है।

आप भी सहयोग राशी भेज कर पुण्य और यश के भागी बनें। —सम्पादक

चरणामृत एवं मन्त्र की अलौकिक शक्ति

—श्री पं० रामस्वरूप जी मिश्र पुजारी

चान्दीकरा (मैनपुरी) से श्री पुजारी लिखते है—

"मैं तीन सितम्बर को बाहर जा रहा था, मार्ग में कुत्ते ने काट खाया। साथियों ने कई औषधि बतलाई। मैंने भगवान् का स्मरण किया और—

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम्।
विष्णोः पादोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥

—कहते हुए भगवत् चरणामृत पीना प्रारम्भ किया। एक सप्ताह के पश्चात मैं पूर्ण स्वस्थ हो गया।"

वास्तव मे मन्त्र तथा सनातन धर्म के सभी सिद्धान्तों में चमत्कारी शक्ति है। शुद्ध श्रद्धा तथा विश्वास फल दायक होता है।

क्यों ? (पूर्वार्द्ध)

--शास्त्रार्थ महारथी श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्री

अहोरात्र-चर्याऽध्यायः

(दूसरा अध्याय)

●

वर्णानां सान्तरालानां, या हि दैनन्दिनी क्रिया।
शास्त्रोक्ता हेतुबहुला, सुतरां सात्र कथ्यते॥

*

प्रस्तुत अध्याय में हम प्रातः जागरण से लेकर शयन पर्यन्त तक की शास्त्र निर्दिष्ट समस्त क्रियाओं की वैज्ञानिकता पर विचार करेंगे और बतलायेंगे कि भारतीय ऋषियों ने जीवन के प्रत्येक क्षण को अमूल्य समझते हुए मानव जगत् के सन्मुख जो दैनिक कार्यक्रम रक्खा है उसके पालन से पुरुष न केवल शतायु होकर सुख पूर्वक जीवन यात्रा निर्वाह कर सकता है, बल्कि इससे भी अधिक 'सहस्रायुः सुकृतश्चरेयम्' का पात्र भी बन सकता है।

नियमित दिनचर्या 'क्यों' ?

हमारी दिनचर्या नियमित है। प्रातः जागरण से लेकर शयन तक की समस्त क्रियाओं के लिए शास्त्रकारों ने अपने दीर्घ कालीन अनुभव से ऐसे नियमों का निर्माण किया है जिनका अनुसरण करके मनुष्य अपने जीवन को सफल कर सकता है।

अन्यान्य मत मतान्तरों का केवल विचारों से ही सम्बन्ध है, आचार से नहीं। इसीलिये वे अपने सदस्यों के स्वेच्छाचार पर कोई नियन्त्रण नहीं रखते परन्तु विचार का थोड़ा सा भी स्वातन्त्र्य उनके यहाँ अक्षम्य अपराध समझा जाता है। जैसे एक मुसलमान-स्त्री हत्या, बाल हत्या, सामूहिक हत्या, सुरापान, खुदा के नूर का सफाया आदि २ कुकृत्य करता हुआ भी—पक्का मोमिन माना जा सकता है. बशर्ते कि वह पैगम्बर और कुरान पर यकीन रखता हो। उदाहरण के लिये नादिर, चंगेज, मुहम्मद बिन कासिम, औरङ्गजेब और अकबर आदि का नाम लिया जा सकता है। इतिहास साक्षी है कि इन में से अकबर को छोड़ कर बाकी पूर्वोक्त सभी लोग कितने अत्याचारी शासक हुए हैं। अकबर का दाढ़ी मुंडा

चित्र इस्लाम के अपमान का जीता जागता प्रमाण हैं। यवन शासन में 'सुराही' और 'पैमाना' तो हुक्के की तरह बादशाहत का एक अनिवार्य अङ्ग समझा जाता था, तभी तो मुगलिया खानदान के अधिकांश बादशाहों के तत्कालीन चित्रों में ये तीन वस्तुएँ प्रायः साथ साथ अङ्कित रहती हैं। यह सब कुछ होते हुए भी मुस्लिम सम्प्रदाय में उक्त सभी लोग इस्लाम की नाक समझे जाते हैं, परन्तु परम विद्वान्, उपनिषदों को अर्बी फारसी में अनूदित कराने वाला दाराशिकोह, सदाचारी मुराद और वेदान्तनिष्ठ शमस्त अवरेज आदि सज्जन केवल स्वतन्त्र विचारों के कारण कत्ल करा दिये गये और इस्लामी इतिहासकारों की दृष्टि में वे आज तक 'काफिर' समझे जाते हैं।

शोकोद्गार

जगदाचार्य श्री स्वामी नारदानन्द जी सरस्वती (नैमिषारण्य) के ब्रह्मलीन होने पर

—श्री विमलेश जी शास्त्री भागवताचार्य

शोक मग्न साधकों के स्वान्त, शांति हीन हुवे,
आशा का भवन भव्य हाय ध्वस्त हो गया।
जिसने भी सुना वह चेतना-विहीन हुआ,
भक्त-वृन्द वेदना से अस्त-व्यस्त हो गया॥
विमलेश क्लेश अपार सिन्धु-ज्वार उठा,
मानस का साहस सभी निरस्त हो गया।
नैमिष क्षितिज से उदीयमान, दीप्यमान,
ज्ञान का महान आज रवि-अस्त हो गया॥१॥
साधकों को समता व शान्ति का पढ़ाके पाठ,
शांति का मसीहा हा सदा को शान्त हो गया।
मेघ बन विश्व में विवेक वारि बिन्दु बोके,
मानस में वेदना विषम बीज वो गया॥
विमलेश, धैर्यवान, धर्मप्राण व्यक्तियों का,
ज्ञात होता सर्वदा को धैर्य-भाव खो गया।
मोह की निशा से हम सब को जगाने वाला,
जागरूक-प्रहरी सदा के हेतु सो गया॥२॥

श्रीमद्भगवद्गीता का प्रामाण्य मीमांसा

—श्री भीष्मदत्त जी शर्मा, एम ए, एम एड., पी-एच. डी.
(मन्त्री धर्मसङ्घ, मेरठ)

महर्षि वेदव्यास भगवान् के अनमोल ग्रन्थ तथा हिन्दू धर्म के विश्कोश 'महाभारत' के भीष्म पर्व के अध्याय २५ से ४२ तक संकलित १८ अध्यायों और ७०० श्लोकों की विषय सामग्री का नाम 'श्रीमद्भगवद्गीता' है। इसी पर्व के अध्याय ४३ के प्रथम श्लोक में—

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्रसंग्रहैः।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुखपद्माद्विनिःसृता॥

कहा गया है कि अन्य शास्त्रों के संग्रह की क्या आवश्यकता है? केवल गीता का ही अली प्रकार से गान (पठन और मनन) करना चाहिए, क्योंकि यह भगवान् पद्मनाभ (विष्णु) के साक्षात् मुख कमल से प्रकट हुई। आज से २५०० वर्ष पहले भगवान् आद्य जगद्गुरु शंकराचार्य जी ने अपने विश्वप्रसिद्ध गीता भाष्य में लिखा है—"दोनों प्रकार के (प्रवृत्ति एवं निवृत्ति) धर्मों को भगवान् ने जैसे-जैसे कहा था ठीक वैसे ही सर्वज्ञ भगवान् वेदव्यास जी ने गीता नामक सात सौ श्लोकों के रूप में ग्रथित किया। ऐसा यह गीता शास्त्र सम्पूर्ण वेदार्थ का सार-संग्रह रूप है और इसका अर्थ समझने में अत्यन्त कठिन है।" आजकल कुछ व्यक्ति सस्ती लोकप्रियता के लोभ में फंस कर इस महान् ग्रन्थ की प्रामाणिकता और पवित्रता को नष्ट करने पर तुले बैठे हैं। ऐसे लोग घटिया किस्म की पुस्तकें छपवा कर जनता में यह भ्रम फैलाने का प्रयास कर रहे हैं कि प्रचलित गीता असली नहीं है। इस में समय-समय पर स्वार्थी लोगों ने नये-नये श्लोक मिलाकर उसे बिगाड़ दिया है। गीता के असली स्वरूप का उद्धार करने का दावा करने में भी ऐसे लोग पीछे नहीं रहते हैं। आज चारों ओर हिन्दू धर्म को अपमानित, तिरस्कृत तथा कमजोर बनाने का जो अभियान चल रहा है, उसी का यह भी एक अङ्ग है। समझदार लोगों को जागने की आवश्यकता है। खतरा दरवाजे पर दस्तक दे रहा है।

प्रक्षेपवाद पाश्चात्यों की देन

हिन्दू धर्म पर दो प्रकार के आक्रमण हुए। एक आक्रमणकारी ने उसके धर्म ग्रन्थों को जलाया और उसके धर्म स्थानों को नष्ट-भ्रष्ट किया। मदान्ध होकर असंख्य पुस्तकें जलाकर राख कर दी गयी और अगणित मन्दिरों को धराशायी कर दिया गया। दूसरे आक्रमणकारी कूटनीतिज्ञ थे। उन्होंने हिन्दू जाति को स्लो पायजन देना शुरू किया। धर्म ग्रन्थों के प्रति हिन्दुओं की महान् श्रद्धा को

हटाने के लिए उन्होंने प्रक्षेपवाद नाम के हाइड्रोजन बम का निर्माण किया। वेद-उपनिषद्, पुराण, रामायण, महाभारत और मनुस्मृति इत्यादि हिन्दुओं के पूजनीय ग्रन्थों में प्रक्षेप (मिलावट) होने का जोरदार प्रचार शुरू हो गया। आज इसी मिथ्या प्रचार का कुफल है कि हिन्दु विचारक भी स्वयं इसके शिकार होकर अपने धर्म ग्रन्थों में मिलावट सिद्ध करने लगे। ईसाई मुसलमान, यहूदी और पारसी आदि के धर्मग्रन्थों में आज तक न किसी पाश्चात्य और न किसी भारतीय विद्वान् ने प्रक्षेप बताने का साहस किया है। आज तो इन्हीं पाश्चात्यों की कृपा से हिन्दू' शब्द को भी विदेशी मानने में लोगों को गौरव की अनुभूति होती है। आर्य विदेशी हैं, भारत के मूल निवासी नहीं हैं, इस मत को सैकड़ों वर्षों से स्कूल, कालेज, विश्वविद्यालयों में पढ़ाया जा रहा है वेद अनादि अपौरुषेय सनातन वस्तु नहीं है। इस प्राश्चात्य मत को ही प्रचारित करने में सारा श्रम, समय एवं सामर्थ्य लगाया जा रहा है। इससे हमारी मानसिकता आज इतनी कलुषित हो गयी है कि हम में से कुछ एक तथाकथित 'सच्ची गीता' जैसी पुस्तकें लिखकर इस महान् ग्रन्थ में भी प्रक्षिप्त श्लोकों की निर्मल कल्पनाओं के बल पर हिन्दुओं के श्रद्धा-विश्वास पर कुठाराघात कर रहे हैं।

गीता में प्रक्षेप कोरी कल्पना

'श्रीमद्भगवद्गीता' का अध्ययन-अध्यापन श्रवन-मनन-निदिध्यासन तथा व्याख्यान हजारों वर्षों से चल रहा है। भाष्यकारों, टीकाकारों, व्याख्याकारों तथा अनुवादकों की एक सुदीर्घ एवं प्रामाणिक परम्परा इस महान् ग्रन्थ से जुड़ी हुई है। सभी ने एकमत होकर सम्पूर्ण गीता के प्रामाण्य को ही स्वीकार किया है। गीता का सर्व प्राचीन भाष्य आद्य शङ्कराचार्य का मिलता है जिसमें ७०० श्लोकों पर भाष्य किया गया है। आज से २५०० वर्षों पहले की यह साक्षी है। इसमें पूर्ववर्ती भाष्यकारों की व्याख्या का तो खण्डन किया गया है किन्तु कहीं श्लोकों पर मतभेद का जिक्र भी नहीं है। इससे सिद्ध है कि महाभारत और आचार्य शंकर के बीच के समय में गीता में कोई प्रक्षेप नहीं हुआ है, अन्यथा, वह उसका भी खण्डन करते। इसके बाद आचार्य रामानुज, मध्व, निम्बार्क और वल्लभ आदि वैष्णव आचार्यों की महान् परम्परा में भी गीता के ७०० श्लोक माने गये हैं। स्वामी शङ्करानन्द, मधु सूदन सरस्वती, सन्त ज्ञानेश्वर, आनन्दगिरि और अन्य अनेक प्राचीन महापुरुषों ने गीता के इसी परम्परागत स्वरूप को स्वीकार कर अपने अनमोल ग्रन्थ लिखे हैं। आधुनिक युग में स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ, लोकमान्य तिलक, अरविन्द, महात्मा गांधी, हरे कृष्ण आन्दोलन के प्रवर्तक स्वामी भक्ति वेदान्त, वेदान्ततीर्थ, डा० राधाकृष्णन तथा विनोबा

भावे एवं आर्य समाज के मूर्धन्य विद्वान पं० बुद्धदेव विद्यालङ्कार जैसे अनगिनत महापुरुषों ने गीता में कोई प्रक्षेप नहीं माना है। वस्तुतः किसी भी ग्रन्थ के यथार्थ स्वरूप का निर्धारण उसकी परम्परा से ही होता है। अन्यथा किसी भी ग्रन्थ पर विश्वास करना कठिन हो जायेगा। यदि थोड़ी भी मिलावट किसी ग्रन्थ में मिल जाये, तो उसका सारा प्रामाण्य ही अविश्वसनीय हो जाता है। इतनी पुष्ट परम्परा देखकर ही किसी विदेशी विद्वान का भी साहस न हो सका कि वह गीता में प्रक्षेप बता सके किन्तु 'गुरु तो गुड़ रहे चेला चीनी हो चले' कहावत को चरितार्थ करने वाले उनके भारतीय अनुयायी गीता में भी मिलावट सिद्ध करने लगे।[1] वस्तुतः यदि गीता में ऐसे लोगों के कथनानुसार समय-समय पर श्लोकों की मिलावट होती रहती तो फिर महाभारत और आचार्य शङ्कर से अब तक ७०० श्लोकों पर ही गाड़ी क्यों रुकी रहती ?

पुनरुक्ति दोष का आरोप ठीक नहीं

प्रसिद्ध कहावत है कि एक एक झूठ को छिपाने के लिए मनुष्य को हजार झूठ बोलने पड़ते हैं। मनपसन्द श्लोकों को असली और नापसन्द श्लोकों को नकली सिद्ध करने के लिए उनका सारा प्रयास इसी प्रकार का है। एक उनकी मिथ्या कल्पना है कि गीता के तथाकथित प्रक्षिप्त श्लोकों में एक ही विषय बार-बार चलता रहता है। बलिहारी बुद्धि की जब कुछ समझ में न आये या मन को न रुचे तो प्रक्षिप्त कहकर उस से पीछा छुड़ाना तो अत्यन्त सरल है किन्तु पुनरुक्ति के रहस्य को समझना बड़ा कठिन है। प्राचीन आचार्यों ने किसी ग्रन्थ के तात्पर्य निर्णय में उपक्रम-उपसंहार, अभ्यास, अपूर्वता, अर्थवाद, फल और उपपत्ति इन छः लिंगों का विधान किया है। इनमें अभ्यास से अभिप्राय इसी पुनरुक्ति से है। ग्रन्थकार, वक्ता और अध्यापक अपने मन्तव्य को बार-बार दुहराते हैं। जिस से वह सुगमता से बोधगम्य हो जाए। अतः जगद्गुरु जी ने अपने भाष्य में लिखा है—"आत्मतत्व बड़ा दुर्बोध है। इसीलिए बार-बार प्रसंग उपस्थित करके दूसरे-दूसरे शब्दों से भगवान् वासुदेव उसी तत्व का निरूपण करते हैं, यह सोच कर कि किसी भी तरह वह अव्यक्त तत्व इन संसारी पुरुषों के बुद्धिगोचर होकर संसार

---

१. डा० वेदप्रकाश द्वारा मेरठ से प्रकाशित 'सच्ची गीता' में ऊल जलूल तर्कों के आधार पर परम्परागत गीता के स्वरूप को सन्देहास्पद बनाने का दुष्प्रयास किया गया है।

की निवृत्ति का कारण हो। गीता में कहीं भी दो श्लोक एक से नहीं मिलते हैं किन्तु वेदों में तो हजारों मन्त्र पुनरुक्त हैं। ऋग्वेद में बहुत सारे मन्त्र यजुर्वेद सामवेद और अथर्ववेद में पुनरुक्त हैं। इतना ही नहीं हर एक वेद में अपने ही मन्त्रों का पुनरावर्त्तन भी हुआ है। गीता में पुनरुक्ति दोष दिखा कर प्रक्षेप की कल्पना करने वाले सज्जन क्या इसी पुनरुक्ति के बल पर वेदों के पुनरुक्त मन्त्रों को प्रक्षिप्त मानने की घोषणा करेंगे? वस्तुतः यह सब योग्य एवं अधिकारी गुरुमुख से ग्रन्थों के यथावत् अध्ययन न करने का ही दुष्परिणाम है।

क्रमभङ्गता की कल्पना निर्मूल

गीता में प्रक्षेपवाद के समर्थकों का दूसरा हथियार है श्लोकों में क्रमभङ्गता का दोष दिखाना। सांप के बिल में हाथ डालना और बिच्छू का मन्त्र न जानना जैसी स्थिति इस आक्षेप की है। समस्त भाष्यकारों टीकाकारों और व्याख्याकारों ने गीता के सारे श्लोकों की परस्पर सङ्गति पर प्रकाश डाला है। शाङ्करभाष्य, शंकरानन्दी टीका तथा मधु सूदन सरस्वती की टाका जैसे ग्रन्थों का स्वाध्याय न करने के कारण ही ऐसी ऊपर से अच्छी लगने वाली शङ्काओं का जन्म होता है। गुरु की अनिवार्यता इसीलिये भारतीय शिक्षा में ज्ञान प्राप्ति हेतु प्रतिपादित की गयी है। प्रक्षेपवादी यदि गीता प्रेस गोरख पुर से प्रकाशित 'गीतातत्व-विवेचनी' ग्रन्थ का भली-भाँति स्वाध्याय कर लें तो उनको अपनी इस निर्मूल कल्पना का स्वयं अनुभव हो जाये। वस्तुतः भगवद् कृपा, शास्त्र कृपा तथा गुरु कृपा से ही निर्मल ज्ञान की प्राप्ति होती है। केवल पुस्तक पढ़ने से निर्भ्रान्त ज्ञान नहीं होता है। आज तक किसी भी महापुरुष ने गीता के किसी भी श्लोक में विषय क्रम भंगता रूप का दोष नहीं दिखाया है। गीता का प्रतिपाद्य विषय क्रमबद्ध रूप में आद्योपान्त चलता है, केवल उसे समझने की आवश्यकता है। स्थाणु का दर्शन न हो, इसमें द्रष्टा का दृष्टि दोष ही माना जाता है।

गीता में वेद विरोध नहीं

आधुनिक युग के अद्वितीय विचारक, विलक्षण तत्ववेत्ता तथा महान् वेद-भाष्यकार धर्म सम्राट् स्वामी करपात्री जी महाराज ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'वेद का स्वरूप और प्रामाण्य' में लिखा है कि "गीता की मान्यता भी वेद मूलक होने में ही है। यद्यपि गीता सर्वज्ञ..... परमेश्वर की ही कृति है, किन्तु यदि वह वेद विरुद्ध हो, ती कदापि उसकी मान्यता नहीं हो सकती। भगवान् बुद्ध परमेश्वर के ही अवतार समझे जाते हैं, किन्तु वेद विरुद्ध होने के कारण ही आस्तिकों में

उनका सम्मान नहीं है।" अतः समस्त प्राचीन आचार्य विद्वानों और सन्तों ने गीता को 'प्रस्थानत्रयी' का अनिवार्य अङ्ग मानते हुए इस पर भाष्य, टीका एवं व्याख्या लिखी हैं। उसके एक श्लोक, शब्द या अक्षर के भी वेद विरुद्ध होने से बड़ा अनर्थ हो जायेगा। समस्त वेदान्त दर्शन का चिन्तन-प्रासाद धराशायी हो जायेगा। हिन्दु तत्व दर्शन ही समाप्त हो जायेगा। गीता को वेदों का सारसर्वस्व माना गया है। महाभारतकार का कहना है—सर्वशास्त्रमयी गीता सर्वदेवमयो हरिः। सर्वतीर्थमयी गङ्गा सर्ववेदमयो मनुः॥ भी० ४३॥

केवल चार पोथियां वेद नहीं

ऐसी 'सर्व शास्त्रमयी' गीता को एक दो वेदमन्त्रों के आधार पर उनका अटकल-पच्चू अर्थ लगा कर 'वेद-विरुद्ध बताना वस्तुतः अज्ञान का ही परिचायक है। पाश्चात्यों तथा उनके अनुयायियों की कृपा से आज लोगों में यह भ्रम कर गया है कि चार पोथियों का ही नाम वेद है और ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् वेद नहीं हैं किन्तु महाभाष्यकार पतञ्जलि के अनुसार ऋग्वेद की २१, यजुर्वेद की १०१, सामवेद की १००० और अथर्ववेद की ९ शाखाएँ हैं। इन ११३१ शाखाओं में से इस समय केवल १२-१४ शाखाएँ मिलती हैं। प्रत्येक शाखा का मन्त्र, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् व्यास जी के समय विद्यमान थे। गीता में इस सम्पूर्ण वेद का भाष्य हुआ है। वेद का कर्मकाण्ड प्रधान भाग ब्राह्मण, उपासना काण्ड प्रधान भाग मन्त्र, और ज्ञान काण्ड प्रधान भाग आरण्यक-उपनिषद् हैं। (क्रमशः)

पौष मास के पर्व एवं त्यौहार

११ दिसम्बर	मंगलवार	पौष	कृष्णा	तृतीया	गणेश चतुर्थीव्रत
१७ ,,	सोमवार	,,	,,	एकादशी	सफल ११ (सब का)
२० ,,	गुरुवार	,,	,,	त्रयोदशी	प्रदोषव्रत
२२ ,,	शनिवार	,,	,,	अमावस्या	पितृपूजनादि
२६ ,,	बुधवार	,,	शुक्ला	चतुर्थी	गणेश चतुर्थी व्रत
२ जनवरी	बुधवार	,,	,,	एकादशी	पुत्रदा ११ व्रत (स्मार्त)
३ ,,	गुरुवार	,,	,,	एकादशी	,, ,, (वैष्णव)
४ ,,	शुक्रवार	,,	,,	द्वादशी	प्रदोषव्रत
७ ,,	सोमवार	,,	,,	पूर्णिमा	माघस्नानारम्भ

राम-कथा लेखक पवन पुत्र

– श्री सुदर्शन सिंह जी चक्र'

प्रजा में किञ्चित् भी भ्रम अल्पप्राण वर्गको पथच्युत कर सकता है, इस आशंका से मर्यादा-पुरुषोत्तमको महान् त्याग करना पड़ा। अपने को ही दण्डित करना पड़ा उन्हें, और ऐसा दण्ड जिसकी वेदना का कहीं अन्त नहीं था। भगवती भूमिजाका अयोध्या से जाना क्या हुआ, अयोध्या सब कुछ होते हुए श्रीहीन हो गयी। सब था—सब कार्य सविधि सम्पन्न हो रहे थे; किन्तु ऐसे जैसे श्मशानोन्मुख शव के साथ वाद्य बज रहे हों।

अम्बाकी अनुपस्थिति में हनुमान वैसे ही अर्धजीवित रह गये थे, और रामने भी उनसे सेवा लेना प्रायः त्याग दिया। वे अपने सुख, अपनी सुविधा, अपने श्रीअङ्ग से उदासीन हो गये। पवन पुत्र कुछ भी करने को उठते तो आज्ञा हो जाती—'हनुमान ! कम से कम तुम तो राम को अवसर दो कि वह कुछ क्षण अपनी आवश्यकताओं को लेकर व्यस्त रहे।

प्रभु व्यस्त रहना चाहते थे। प्रभात से—ब्रह्ममुहूर्त से रात्रि के प्रथम प्रहरान्त तक व्यस्त रहते थे। किसी सेवकको अनुजों को कोई छोटी सेवा करने का अवसर ही कहां था, जब हनुमान को ही कोई अवसर नहीं प्राप्त होता था। राम सदा प्रबुद्ध ज्ञानघन हैं; किन्तु लीला पूर्वक भी रात्रि-शयन अब समाप्त हो चुका था। अपने प्रभु की यह अवस्था हनुमान को असह्य थी; किन्तु कुछ करना सम्भव नहीं था।

ऐसी अवस्था में बजरंग बली ने भी कालक्षेपका साधन निकाला। वे प्रायः चले जाते थे अयोध्या से। दक्षिण समुद्र-तटपर सेतु-बन्ध के समीप शिलाओं का बहुत बड़ा समूह था। सेतु-निर्माण के समय वानर इन्हें दूर दूर से उठा लाये थे। सेतु-निर्माण सम्पूर्ण हो जाने के कारण इन्हें एकत्र ही डाल दिया था उन्होंने। हनुमान ने शिलाओं को अपने उपयोग का पाया। वे वहाँ जाकर बैठ जाते थे और सायंकाल अन्धकार होने तक वहीं रहते थे इन शिलाओं को उन्होंने एक क्रम से सजा लिया था। ऐसे क्रममें कि इनका समतल अंश ऊपर रहे। इनको उठाना—रखना उनके लिए ऐसे ही सरल था, जैसे भूर्ज पत्र अथवा ताड़ पत्र के ऊपर लिखे ग्रन्थों के पृष्ठ साधारण जन उपयोग के समय उठते हैं। शिलाएँ अनगढ़ थीं, अनेक आकार एवं अनेक रंगों की थीं।

केसरी-नन्दन उन पर श्रीरामचरित लिखने लगे। जैसा श्रीराम-चरित उन्होंने सुना था, देखा था—उसे जिस दृष्टिकोण से समझा था,

इस काव्य में कहो आ सकता था। वे काव्य लिखने में लग गये थे—एक वानर को श्री रघुनाथ के लोकोत्तर चरित्र ने कवि बना दिया था। शिलाएँ उनके लिए लेखन-पत्र थीं। उनके दक्षिण हस्त की मध्यमा अँगुली का नख लेखनी था।

हनुमान को अपना यह लेखन कितना आनन्द देता था, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। कला एवं काव्य की अधिदेवता भगवती भारती अन्तःकरण के अधिष्ठाता ब्रह्मा जी की संगिनी हैं और वे राम के श्री चरणों के सदा समीप ही रहती हैं। अतः हृषीकेश का चिन्तन करते ही वे स्वयं सेवा-समुत्सुका हो उठती हैं। उन्होंने स्वतः पवन पुत्र के मानस में मञ्जु शब्दावली अद्भुत भाव सजाना प्रारम्भ कर दिया। अन्तस्तल में आसीन उनके स्वामी की कृति थी वह। यह वानर हनुमान केवल अपने नख से उसे शिला तल पर अङ्कित मात्र कर रहा था। इस अङ्कन का पारिश्रमिक आशा से अत्यधिक आनन्द के रूप में उसे प्राप्त हो रहा था। 'आज कल श्रीआञ्जनेय कुछ लिखने में लगे हैं।' प्रभु के सम्मुख ही श्रीलक्ष्मणलाल ने एक रात्रि को प्रथम प्रहर में हनुमान के दाहिने हाथ की मध्यमा का स्पर्श करके किञ्चित् घिसे उसके नख की ओर संकेत कर दिया। 'स्वामी के देवे- ने चारु चरितों के चिन्तन का प्रयत्न कर लेता हूँ।' हनुमान ने मस्तक झुका कर संकोच पूर्वक स्वीकार कर लिया—'अन्यथा वानर की क्या बुद्धि और क्या उसका लेखन।'

प्रभु गम्भीर बने रहे। लेकिन लगता है कि अयोध्या की यह चर्चा व्यापक बन रही थी। हो सकता है कि किसी देवता, गन्धर्व, सिद्ध आदि ने इस समाचार का प्रसार किया हो। आश्चर्य नहीं कि देवर्षि नारद ही हेतु हों। उन्हें समाचारों के प्रसार में बहुत उत्सुकता रहती है। कारण कुछ भी हो, एक प्रातःकाल जब हनुमान सरयू-स्नान करके प्रयाण करने ही वाले थे, महर्षि वाल्मीकि सम्मुख मिले। महर्षि को उन्होंने प्रणाम किया श्रद्धा सहित - महर्षि ने कहा—'पवन पुत्र! सुना है कि आप कोई रामकथा काव्य लिख रहे हैं?

"वानर क्या काव्य-रचना करेगा। किसी प्रकार कालक्षेप करने का एक बहाना बना रखा है' उत्तर था

'आञ्जनेय! आप जानते होंगे कि मैं ने भी एक रामकथा काव्य की रचना की है।' महर्षिने आग्रह पूर्वक कहा—'आज मैं श्रीराम से नहीं आपसे मिलने आया हूँ और मेरी प्रार्थना स्वीकार कर लें तो आपके काव्यका दर्शन करना चाहता हूं।

हनुमान के महर्षिको कन्धे पर पर बैठाया और ले जाकर अपनी लिखी शिलाओं के समीप उतार दिया। वे अविलम्ब आरम्भिक शिला मे अत्यन्त एकाग्रता पूर्वक उन अंकित शिलाओं को देखने लगे। यद्यपि महर्षिको ऊंची शिलाओं पर चढ़ने-उतरने में श्रम हो रहा था; किन्तु उन्होंने संकेत से ही इसमें पवन पुत्र की सहायता अस्वीकर कर दी।

अपेक्षाकृत शीघ्र देख लिया महर्षिने उन शिलाओं को। सबको देखकर जब वे श्रान्त बैठ गये उनका श्रीमुख खिन्न हो गया। हनुमान ने आदि कवि से पूछा –आपके श्रीमुख पर मैं विषाद देखता हूं। मेरी इस रचना में कोई दोष ? कोई च्युति ? कोई प्रमाद हुआ प्रभु ?'

महर्षिने शिथिल स्वर में कहा—'हनुमान जी ! आपकी रचना इतनी उत्कृष्ट है कि यदि यह लोकमें प्रसिद्ध हुई तो मेरी कृतिको कोई देखना नहीं चाहेगा। मैं बड़ी आशा रखता था अपनी कृतिसे।'

'मैं कोई सेवा कर सकता हूं ?' हनुमान ने हाथ जोड़कर पूछा।

कर सकते हो' महर्षि सोत्साह बोले – 'वचन दो तो कहूं।'

पवनपुत्र ने निवेदन किया—मैं तो सेवक हूं, आज्ञापालन करूंगा।'

महर्षिने कहा—'अपनी इस रचनाको कहीं इस प्रकार छिपा दो कि इसे देवता भी देख न सकें। अब लेखन मत करो और दूसरी भी कोई रचना प्रारम्भ मत करो।'

हनुमान ने चुपचाप अङ्कित सब शिलाओं को एक दूसरी के ऊपर रखा। सबको कन्धेपर उठाया और आकाशमें ऊपर उठे। कुछ दूर जाकर शिलाएं समुद्र को समर्पित कर दो।

शिलाओं को सागर-गर्भ में समर्पित करके हनुमान लौटे तो देखा कि महर्षि मस्तकपर हाथ रखे रुदन कर रहे है। पवन पुत्र को आलिंगित करके उनका रुदन वेग बढ़ गया। कठिनाई से बोल सके—'पवन कुमार ! मैंने अपने यशके लोभ में आज अत्यन्त अनर्थकारी कार्य कर लिया। मैंने मानवोंको श्रीरघुनाथके इतने मञ्जु महाकाव्यसे वञ्चित कर दिया। अब मेरा आशीर्वाद है कि आपका सुयश संसारमें सदा उज्वल रहे।'

"सुयश ?' मैंने तो इस महत्वहीन बातको कभी मन में आने ही नहीं दिया। सुयश तो मेरे स्वामी श्रीरघुनाथका—वही सुयश सदा प्राणी का मङ्गल-विधायक है। वह सुयश तो महर्षिके महाकाव्यमें है।" हनुमान नम्र स्वर में बोले।

कैकेयी का अन्तर्द्वन्द्व

—मानसमर्मज्ञ, श्री पं० सुरेश जी शर्मा रामायणी

(गतांङ्क से आगे)

कह उठे श्री राम मां इतना सुगम यह है नहीं,
दुष्ट रावण के दमन को यदि तपोबल है नहीं।
इसलिये चौदह बरस तक मैं करूं तप साधना,
हो सकेगा तभी सम्भव रक्षकुल संहारना।।२६।।

मात बोली तात! तेरी भावना तो दिव्य हैं,
निज पिता से मंत्रणा करना उचित कर्तव्य है।
इसलिये हे वत्स उनसे ही अनुज्ञा ले बढ़ो,
शत्रुदल पर बन्धु चारों टूट विद्युत् से पड़ो।।२७।।

राम बोले मां पिता जी तो न मानेंगे कभी,
दुष्ट रावण से नहीं वे वैर ठानेंगे कभी।
युद्ध में मम तात को कोई न सकता जीत है,
किन्तु अन्तर राक्षसी आतङ्क से भयभीत है।।२८।।

क्या नहीं देखे तुम्हीं ने तात के वे चित्र थे।
मांगने आए मुझे जब सन्त विश्वामित्र थे।
उस समय गुरुदेव यदि करते न कुछ अभ्यर्थना,
तो कभी स्वीकार होती क्या सरल सी प्रार्थना।।२९।।

तात का अनुराग मेरी बेड़ियां बन जायगा,
और शुभ संकल्प मेरा एकदम घुट जायगा।
मौन रह कुछ काल बोली मां सहज सुख धाम से,
क्या अपरिचित हो अरे! इसके विषम परिणाम से।।३०।।

छोड़ कर के अमृत वे विष घूंट पी सकते नहीं,
त्यागकर तुमको तुम्हारे तात जी सकते नहीं।
ठाठ अलका की अवध के सब मिटेंगे राजसी,
भरत को भी मां लगेगी बस भयानक राक्षसी।।३१।।

श्री रहित सब रानियां हो जाएँगी इस स्वांग से,
मांग का सिंदूर भी पुँछ जाएगा इस मांग से।
राम बोले यदि पुँछा सिन्दूर तीनों भाल का,
बच सकेगा किन्तु मां सिन्दूर लाखों भाल का।।३२।।

मन्त्र का वैज्ञानिक महत्त्व

—श्री अशोक कुमार जी एम. एससी.

भारतीय संस्कृति के प्राणाधार वेदों की ऋचाओं को 'मन्त्र' नाम से भी सम्बोधित करते हैं। साधना के निमित्त गुरु अपने शिष्य को जपादि के लिये जो विशिष्ट सूत्र बतलाता है—वे भी मन्त्र कहे जाते हैं।

सचिव राजा को जो महत्त्वपूर्ण परामर्श देता है वह भी मन्त्र कहा जाता है—इसीलिये सचिव को मन्त्री भी कहते हैं। इस शब्द की संरचना मत्रि-गुप्त भाषणे धातु से हुई है।

भाषा वैज्ञानिक तथा वैज्ञानिक क्षेत्र में ध्वनियों के समूह को मन्त्र कहते हैं। ध्वनितरङ्ग ही मन्त्र का प्रभाव है। आज के वैज्ञानिक युग में इस विषय में विभिन्न परीक्षण किए जा रहे हैं। ध्वनि तरङ्गों के द्वारा मात्र इच्छा पूर्ति तथा संकटनिवारण ही नहीं होता अपितु मानव जो चाहे इन तरङ्गों द्वारा प्राप्त कर सकता है।

अमेरिका के श्री राल्फ लारेन्स हीथ ने इस विषय में कई सफल परीक्षण किए हैं। उन्होंने न जाने कितने स्नायु-रोग से पीड़ित रोगियों का सफल उपचार किया है। इतना ही नहीं उन्होंने एक ऐसी संस्था का निर्माण किया है जो सङ्गीत से रोगियों की चिकित्सा करती है। उसका नाम है "आर० फोर० आर०" (रिकार्डिङ्ग फार रिलग्जेशन, रिफ्लेक्शन, रेस्पांस एण्ड रिकवरी) हमारे वेदों में मन्त्र का यही वैज्ञानिक आधार बतलाया गया है। महर्षि रमण कहा करते थे कि मन्त्र का शुद्ध उच्चारण ही उसका अर्थ है। क्योंकि कोई भी मन्त्र उच्चारण करते समय हमारे यौगिक अङ्गों में एक स्पन्दन उत्पन्न करता है जिससे कुछ शक्ति तरङ्ग उत्पन्न होती हैं। इन शक्ति तरङ्गों से मनुष्य जो चाहे वह प्राप्त कर सकता है।

उदाहरण के लिये सूर्य नमस्कार मन्त्र लिया जा रहा है—

आस्ट्रिया के वैज्ञानिक श्री लेवर ले जारिया के अनुसार प्रणव (ॐ) के उच्चारण से मस्तिष्क, पेट और सभी सूक्ष्म इन्द्रियों पर प्रभाव पड़ता है। "ह्रां" से फेफड़ों, गले, पेट, हृदय और मस्तिष्क को बल मिलता है। "ह्रीं" से पाचन यन्त्रों, फेफड़ों, गले एवं हृदय पर प्रभाव पड़ता है। "ह्रूं" से पेट, जिगर, तिल्ली आंतों और गर्भाशय को शक्ति मिलती है। "ह्रैं" से मूत्र मार्ग नीरोग होता है। "ह्रौं" से उदर विकार दूर होते हैं, पक्वाशय एवं आमाशय सशक्त होते हैं,

मूत्राशय शुद्ध होता है, कब्ज दूर होता है। "ह्रः" से अन्त्र नली और फेफड़ों को बल मिलता है। इस प्रकार निम्नांकित सूर्य नमस्कार मन्त्र से मनुष्य नीरोग हो जाता है।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः, ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः मित्र रवि सूर्य भानुखगपूषाहिरण्यगर्भमरीच्यादित्यसवित्रर्कभास्करेभ्यो नमः" इंग्लैंड के श्री मूलर लिखते हैं "युवा एवं वृद्ध, मोटे एवं कमजोर सभी को सूर्य नमस्कार करना चाहिये। यदि शरीर को व्यायाम का अभ्यास नहीं तो आरम्भ में थोड़ा-थोड़ा करना चाहिये और फिर उसे धीरे-धीरे बढ़ाते रहना चाहिये वास्तव में मन्त्रों के अक्षरों को प्रमुख रूप से पाँच तत्वों में विभाजित किया हुआ है। जैसे "ह" शब्द के उच्चारण से मनुष्य के ब्रह्माण्ड पर विशेष प्रभाव पड़ता है इसलिये यह आकाश तत्व का बोधक है। चूँकि आकाश तत्व सभी तत्वों से महान एवं बड़ा है। इसलिये "ह" जिन शब्दों में आएगा, वह बड़े के अर्थ में ही समझे जाएँगे। चाहें वह किसी भी रूप में बड़े हो। यथा महा, महान, महत्, हस्त, हम आदि। एक और भी विशेष बात है कि "ह" पर जितना अधिक जोर पड़ेगा, उतना ही शब्द में बड़ेपन की मात्रा बढ़ जायेगी। जैसे महान में "ह" पर बहुत जोर पड़ रहा है। इसलिए यह सब से बड़ा है। महत् में "ह" इतना जोरदार (दीर्घ) नहीं है।

इसी प्रकार "र" अग्नि है, "क" काम है "म" सर्वव्यापी तत्व विष्णु है, "ई" शक्ति है "ल" इन्द्र है।

अग्नि पुराण में ॐ ह्रीं महामहिषमर्दिनी स्वाहा का अर्थ इस प्रकार बतलाया है :—

म=विष, ष, हि=मज्जा, म=काल, र=अग्नि, द=अत्रि, निष्ठ=इ, नि, स्वाहा=महिष मर्दिनि,।

अग्नि पुराण में इसको दुर्गा-हृदय बताया है। इसी प्रकार विद्रावणकारी मन्त्र "द्रीं" का अर्थ बतलाया है। द=अत्रि, र=अग्नि, ई=वामनेत्र बिन्दु=(.)

अथर्ववेदीय देव्युपनिषद में भी "ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चै" का अर्थ इस से मिलता जुलता ही है।

ऐं=वाणी, ह्रीं=माया, काम=क्लीं सूर्य=म, दक्षिण कर्ण=उ, आ=नारायण, य=वायु ह=आकाश, अर्धचन्द्र (ँ) इस प्रकार इन मन्त्रों की ध्वनि तरङ्ग ही उनका अर्थ है।

गायत्री – रहस्योपनिषद के अनुसार गायत्री के चौबीस अक्षर चौबीस देवता

हैं, चौबीस ही इसके वर्ण है, चौबीस ही छन्द हैं, चौबीस ही शक्तियाँ है चौबीस ही ऋषि हैं और चौबीस लाख से इसका पुरश्चरण होता है।

उपरोक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि मन्त्र की ध्वनि (तरङ्ग) ही मन्त्र का प्रभाव है। अभी कुछ महीने पूर्व आचार्य मृत्युञ्जय देव से जो टोकियो यूनिवर्सिटी से न्यूक्लीयर फिजिक्स में डी० एस-सी० (D. Sc.) हैं, से मेरा इन मन्त्रों पर कुछ वार्तालाप हुआ था। बातचीत के दौरान वह कहने लगे कि यजुर्वेद में जो रुद्राष्टाध्यायी के मन्त्र है, वह सभी वैज्ञानिक आधार रखते हैं। विशेषकर ,'वाजश्व" सूक्त तो ठीक इसी प्रकार है जैसे "Quantrum Levels" [क्वान्टम लेवल्स]।

न्यूयार्क के डा. पोडोलास्की ने ध्वनि तरङ्गों ने एक पथरी के रोगी को ठीक किया तथा एक लड़की ने भी इन ध्वनि तरंगों से लकवे से मुक्ति प्राप्त की है। इतिहास साक्षी है कि रामपुर के नवाब लकवे के रोग से पीड़ित थे। उस्ताद सूरज खाँ के राग-जैजैवन्ती ने उन्हें इस रोग से मुक्त किया। बैजूबावरा ने चकेरी के राजा राजसिंह को "राग पूरिया" सुना कर अनिद्र रोग से मुक्त किया था।

इस प्रकार ध्वनि तरंगों से मन्त्र का आशय है। मन्त्र का शाब्दिक अर्थ कोई विशेष महत्व नहीं रखता। लेकिन मन्त्र का स्पन्दन बहुत अधिक महत्व का विषय है। वेदों में प्रणव (ॐ) का अर्थ यही किया है कि इससे प्राण उर्ध्वगामी होते हैं। इसीलिए "ॐ" योग का आधार है क्योंकि प्राणों को उर्ध्वगति देना ही योग है एवं अधोगति देना ही भोग है।

'ॐ" की ध्वनि तरंगों से मनुष्य जो चाहें वह निश्चित ही प्राप्त कर सकता है। वैज्ञानिकों ने अपने अनुभव के आधार पर घोषणा की है कि ॐ के विधिपूर्वक उच्चारण से एक बड़ी दीवार गिरायी जा सकती है। इसका अर्थ है कि शब्दों की शक्ति से इस स्थूल जगत को प्रभावित किया जा सकता है। मन्त्र शक्ति एक विशद विषय है, इस गूढ़ विषय का गहन अध्ययन अपेक्षित है।

मन्त्र का वैज्ञानिक महत्व जानने की आज बहुत आवश्यकता है। क्योंकि पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव में आकर मानव नास्तिक होता जा रहा है। सम्पूर्ण ज्ञान के उद्गम स्रोत हमारे वेद ही हैं वेदों का वैज्ञानिक दृष्टि से अनुसन्धान किया जाना चाहिये। यह मानवीय जीवनमूल्यों के लिये बहुत लाभदायक रहेगा।

नक्षत्र कहते हैं.....

डा० केदारनाथ जी जगता एम. ए., पीएच. डी,
व्याकरण, ज्योतिषाचार्य

पौष मास का राशी फल
(१६ दिसम्बर से १५ जनवरी तक)

इस मास में खप्पर योग का प्रभाव अनेक राष्ट्रों को प्रभावित करेगा। रान, इराक, मध्य एशिया के देश, रूस, पाकिस्तान तथा पश्चिममी देशों में तावरण अशान्त रहेगा। प्राकृतिक प्रकोप, क्रान्ति, संघर्ष से हानि सम्भव है।

भारत की पश्चिमी सीमा तथा मध्य प्रदेश (मध्य भारत) के वातावरण में विक्षोभ सम्भव है। कुछ प्रदेशों में शासन तन्त्र में भी परिवर्तन सम्भावित हैं। कृतिक बाधाओं से अन्न-क्षति। महँगाई तथा शीत रोगों से प्रजा को कष्ट। र्वाचन प्रचार।

न्द्र राशि से भविष्य देखें)

मेष—धन हानि, सन्तान से सुख, कार्यों में विघ्न, वायु तथा श्लेष्मा से रीर पीड़ा। मासान्त में पुत्र (सन्तान) से पीड़ा, मित्र की हानि, विवाद। सान्त में स्वास्थ्य लाभ, अर्थ लाभ, सुख सन्तोष प्राप्त। दिस० २०, २१, ३०, , जन. ८, ९ अशुभ।

वृष—शरीर कष्ट, हानि, लड़ाई झगड़ा, स्त्री पीड़ा, यात्रा कष्ट, ज्वर , धन लाभ में बाधा, कार्यों में बाधा, दुष्कर्म में प्रवृत्ति, मान हानि।

मासान्त में सन्तान तथा द्रव्य प्राप्ति, दिसम्बर २२, २३, जनवरी १, २, , ११ अशुभ।

मिथुन—किसी से विरोध, शत्रु निरुत्साहित, सुख प्राप्त, अर्थ लाभ में धा, शुभ यात्रा स्त्री पुत्र से प्रसन्नता, तथा व्यय, गुप्त चिन्ता। मासान्त में ना कष्ट, अर्थ हानि, कलह, उदर रोग, ज्वर भय, शरीर में निर्बलता। दिस. , १७, २५, २६, जन० ४, ५, १२, १३ अशुभ,।

कर्क—मानसिक सन्तुलन की हानि, शोक, स्त्री तथा सन्तान से कलह, शत्रु पीड़ा, शत्रु पराजित, मान हानि, अर्थ नाश, अशुभ समाचार प्राप्ति, उदर या त रोग, मासान्त में कार्यों में सफलता, स्थिरता, स्त्री पुत्र से प्रसन्नता, अर्थ भ। दिस० १८, १९, २७, २८ जन, ६, ७, १४, १५ अशुभ।

सिंह—स्त्री तथा बन्धु से कलह तथा दुःख, अर्थ हानि, बन्धुओं से वैर,

राज पक्ष से लाभ, कुटुम्ब वृद्धि सन्तान लाभ, शुभ व्यय। मासान्त में
रोग से कष्ट, उदर या नेत्र रोग, शोक, स्त्री को पीड़ा। दिस० २०, २१,
जन० ८, ९ अशुभ।

कन्या—अर्थ लाभ, अधिकार तथा स्थान लाभ, सुख, पशु तथा
भय, विजय, रोग शान्ति, समय अनुकूल, मित्र विश्वास घात करे। साथ
वृद्धि, धर्म हानि, अनैतिक कार्यों में प्रवृत्ति, अकस्मात् धन हानि। दिस०
जन० १, २, १०, ११ अशुभ।

तुला—सन्तान तथा धन हानि सम्भव, शत्रु भय, मित्र से वियोग
में विघ्न साथ ही शत्रु हतोत्साह, मंगल समाचार की प्राप्ति। मानसिक
ज्वरादि पीड़ा, कुटुम्ब से कलह पुत्र के कारण कष्ट। मासान्त में मित्र
दिस० १६ १७, २५, २६, जन० ४, ५, १२, १३ अशुभ।

वृश्चिक—पीड़ा, रोग भय, स्वजनों से वियोग, हानि, कुटुम्ब से दु
पीड़ा, सुख हानि, उदर रोग, भाइयों से कलह, शत्रु वृद्धि, विवाद,
मासान्त में अर्थ लाभ। दिस० १८, १९, २७, २८, जन० ६, ७,
अशुभ।

धनु—अर्थ हानि, परदेश गमन, उदर रोग, पित्त पीड़ा, पराजय,
को कष्ट, स्थानान्तरण, दण्ड प्राप्ति, मासान्त में अर्थ लाभ, प्रसन्नता,
दुःख, उन्नति में बाधा, दिस, २०, २१, ३०, ३१, जन० ८, ९ अशुभ।

मकर—आशा से कम अर्थ प्राप्त, उत्साह प्रबल, कटु और अशुभ
प्राप्त, शोक, मास प्रारम्भ में उन्नति, सुख तथा सम्मान प्राप्ति, शारीरि
दुःख, सम्पत्ति को भय, अनावश्यक व्यय, श्लेष्मा से पीड़ा ० २१, २
१ २, १०, ११ अशुभ।

कुम्भ—सुख, अर्थ लाभ, स्त्री सुख, विलास, पित्त और वायु
विकार, बन्धुओं से वैर, मन हानि, अशुभ कार्यों में प्रवृत्ति, सम्पत्ति
मासान्त में उन्नति अधिकार तथा सम्मान प्राप्ति, स्वास्थ्य लाभ। दि०
२५, २६, जन० ३, ४, १२, १३, अशुभ।

मीन—अर्थ लाभ, पराक्रम वृद्धि, स्त्री से सुख, चिरकालीन शो
हानि, पाप रुचि, सन्तान को पीड़ा चिन्ता, पित्त रोग, मासान्त में सु
विजय, कामना सिद्धि। दिस० १८, १९, २७, २८, जन० ६, ७,
अशुभ।

नल-दमयन्ती

—श्री प्रो० शिवनारायण जी सक्सैना 'मानस भ्रमर'

(अंक से आगे)

इन बच्चों को देख देख कर, क्यों तुमने है रुदन किया
केसी ने पूछा बाहुक से, उसने उत्तर यही दिया ॥१४॥
इसी तरह के बच्चे मेरे, बहुत दिवस के छूटे हैं।
इन्हें देख अन्तर भर आया, अश्रु नयन से फूटे हैं ॥१५॥
बहुत हुआ अब भूखे होंगे, भोजन स्वयं बना डालो।
आटा आदि रखा थाल में, उसको गूंथो या चालो ॥१६॥
फिर चुपके से छुपी केसनी, वातायन से देखा था।
नल के आवाहन से पानी, प्रकट हुआ अवलेखा था ॥१७॥
नल से प्रेरित अग्निदेव भी, ज्वालमाल से दहक उठे।
देख अलौकिक चमत्कार, केसी मन-नीरज महक उठे ॥१८॥
दमयन्ती से जाकर उसने, सारा हाल सुना डाला।
व्यथा बढ़ी फिर उर में उसके, मन बेहाल बना डाला ॥१९॥
ओ ! मेरी प्रिय विरहसंगिनी, इतना काम बना लाओ।
बना बनाया भोजन उनका, थोड़ा यहां उठा लाओ ॥२०॥
भोजन चख कर संशय भागा, उर में था उत्साह भरा।
अंक भेंटने को प्रियतम के, मन में था अनुराग भरा ॥२१॥
इतना संशय शेष रहा था, बाहुक काला-काला था।
आर्यपुत्र कर्पूर-गौर थे, उनका रंग निराला था ॥२२॥
निश्चय पूर्ण किया था मन में, रानी की आज्ञा ले ली।
साहस अपने उर में भर कर, बाहुक के सम्मुख होली ॥२३॥
नल के लक्षण पूर्ण आप में, कहो रंग कैसे काला।
किसने स्वर्ण कलश में मेरे, भर दी यह स्याही-हाला ॥२४॥
या यह काला लेप ऊपरी, अन्दर घट उजला होगा।
श्याम घटा के बीच चन्द्रमा, अन्तर तम चमका होगा ॥२५॥
झर-झर आंसु बरस रहे थे, उभय पक्ष का रोना था।
व्यथा-कथा पूरी कह डाली, भाग्योदय अब होना था ॥२६॥
स्मरण किया फिर कर्कोटक का, अम्बर तन पर ओढ़ा था।
दिव्य रूप हो गया उसी क्षण, वह कुरुप फिर छोड़ा था ॥२७॥
आलिंगन में बन्ध गई प्रिया सरिता सागर से मिलती है।
तरस रही जल बिना मछरिया, जी भर के जल पीती है ॥२८॥

शरीर-तत्त्व विवेचन

आयुर्वेद मार्तण्ड श्री पं. रामस्वरूप जी शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य

(गतांक से आगे)

इन्हें कोई रोग सताएं ऐसा असम्भव है। रोग नामक वस्तु कहीं बाहर से नहीं आती इसका प्रादुर्भाव शरीर से ही होता है। यह उन्हीं को सताता हैं जो अपनी शक्ति का ह्रास व्यर्थ में करते रहते हैं।

चन्द्र मण्डल कफ का प्रसादन करने के कारण शीतता प्रदान कर मस्तिष्क को ठंढ़ा रखता है। विचारशील व्यक्तियों का मस्तिष्क सर्वदा ठंढ़ा रहता है। उनकी संज्ञा स्थितप्रज्ञता की होती है। शरीर में चन्द्र मण्डल की ही यह देन है। शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा के प्रकाश से यह स्पष्ट अनुभव हो जाता है। इसकी आह्लादकारिणी चांदनी मस्तिक को शांति प्रदान करती है।

जब कभी चन्द्र मण्डल में विकृति आती है, तब यह अपनी शीतता का परित्याग करता है। ऐसा होने पर मनुष्य (प्राणी) पागल, उन्मादी जाता है। क्रोधादि के लक्षण प्रकट होते हैं। कुपित कफ पित्त का आश्रय ले उन्माद; अपस्मार आदि का कारण बनता है। बार-बार दौरे आने लगते हैं। जीवन सारहीन हो जाता है। समय-असम रोगी बेहोश (चेतानाहीन) हो छटपटाने लगता है। यह रोग आबाल, वृद्ध, स्त्री, पुरुष सभी में देखा जाता है। स्त्रियों में योषापस्मार की गति दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। यह मानव समाज के कुकृत्यों का फल है। मानव बचपन से ही अपरिपक्वावस्था में ही अपने विनाश के साधन की ओर अग्रसर हो जाता है। बाद में पछताने के सिवाय कोई चारा नहीं रह जाता। तदर्थ योषापस्मारादि व्याधियां शरीर को अपना अङ्ग बना लेता है और जीवन भार प्रतीत होने लगता है। यह स्थिति सभी समाज में घर किये हुए है ध्यान दीजिए। महर्षियों के वचनों की ओर—

मरणं बिन्दुपातेन, जीवनं बिन्दुधारणात्।
तस्मादतिप्रयत्नेन, कुर्याद् वै बिन्दुधारणम्॥

बिन्दु धारण से जीवन तथा पात से मृत्यु है। अतः अति प्रयत्नपूर्वक बिन्दु का धारण करना ही श्रेयस्कर है।

चन्द्र मण्डल की विकृति को दूर करने के लिए मुक्ता (मोती) रजत (चांदी) मिश्रित रस उपरसों का प्रयोग हितावह है।

कफ के सभी स्थानों पर विकृत कफ तथा पित्त का प्रभाव पड़ता है। अर्थात्—कफ विकृति होने पर केवल चन्द्र मण्डल में ही नहीं अपितु सभी कफ प्रधान अवयवों पर इसका प्रभाव पड़ेगा।

कफ के स्थान —

१. क्लेदन कफ आमाशय में २. अवलम्बन हृदय में ३. रसन कण्ठ में ४. स्नेहन सिर में, ५. श्लेष्मन सन्धि स्थानों में रहता है। इस प्रकार ५ प्रकार का कफ अपने-अपने स्थानों पर शरीर की पुष्टि का कारण बनता है। मस्तक, कण्ठ, उरप्रदेश क्लोम जिह्वा, अस्थि सन्धि आमाशय, घ्राणेन्द्रिय ये सब कफ प्रधान स्थान हैं।

१. क्लेदन कफ—अन्न को गीला कर पाचन में सहायक होता हैं, यह आमाशय में रहता है।

२ अवलम्बन–इसका स्थान हृदय है। अवलम्बन आदि कार्य कर हृदय का पोषक बनता है।

३. रसन कफ– यह कण्ठ प्रदेश में रहता है। रस को ग्रहण कर कड़वे, चरपरे, मधुर आदि रसों का ज्ञान कराता है।

४. स्नेहन कफ—यह मस्तक में रहता है एवं इंद्रियों को तृप्त करता है, इसी कारण इंद्रियां अपने-अपने कर्म में कार्य-शील होती हैं।

५. संश्लेषण कफ—यह संधि स्थानों में रहता हैं तथा इन्हें जोड़ता है।

चन्द्र मण्डल की विकृति से इन सभी स्थानों पर प्रभाव पड़ना आवश्यक है।

गीता

यह क्या हुआ कि अभी-अभी तो रो रहे थे ताप से,
हैं, और अब हंसने लगे वे आप अपने आप से!
ऐं क्या कहा, निज चेतना पर आ गई उनको हँसी,
गीता श्रवण के पूर्व थी जो मोह - माया में फंसी॥

—राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण गुप्त

गीताशास्त्रं सदा सेव्यम्

डा० सूर्य प्रसाद जी मिश्र साहित्याचार्य, पीएच. डी.

मन्थनं सर्वशास्त्राणां श्रीकृष्णमुखनिर्गतम् ।
गीताशास्त्रं सदा सेव्यं भुक्ति-मुक्ति प्रदायकम् ॥१॥

श्रामद्भगवद्गीता शास्त्र समग्रशास्त्रों का समुन्थित रूप होने के कार . भगवान श्री कृष्ण जी के मुखारविन्द से निर्गत होने से तथा भुक्ति-मुक्ति प्रदाय-कता हेतु से सदैव सेवन करना चाहिए ।

उपासना-विभा तत्र भाति ज्ञानमयी शिवा ।
कर्मभावश्च तत्रास्ति प्रेरको भुवि शोभनः ॥२॥

इस गीता शास्त्र में ज्ञान मूला उपासना तथा धरा पर शोभन कर्म भावना का प्रेरणादायी चित्र प्रस्तुत किया गया है ।

कल्पवृक्षनिभा गीता सदा काम प्रपूरिका ।
सर्वधर्मेषु सद्भावं वितनोति च भूतिदम् ॥३॥

यह गीता शास्त्र कल्प वृक्ष के समान तथा सभी कामनाओं का पूरक तथा कल्याण वह सभी धर्मों में सद्भाव विस्तारक है ।

व्याख्यात्री विश्वरूपस्य धर्मस्य च प्रवर्तिका ।
साधना योगिवर्याणां गीतामृतसुपावनम् ॥४॥

यह गीता विश्व रूप भगवान् की व्याख्या करने वाली धर्म की प्रवर्तिका, महर्षियों की स्थापना स्थली तथा धारा पर पावन अमृत रूप है ।

गीता शास्त्रमिदं दिव्यं सर्वेषां हितसाधकम् ।
सेवनेनास्य नूनं स्युर्भक्ता विगतकल्मषाः ॥५॥

यह गीता शास्त्र दिव्य, सभी का हितावह तथा इसके सेवन से निश्चय ही भक्त निष्कल्मष बनते हैं ।

★●★

● गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्रविस्तरैः ।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुखपद्माद् विनिसृता ॥

●● जोगी ताहि न जानिये, जो गीताहि न जान ।
जोगी ताही जानिये जो गीता ही जान ॥

विसंगत इतिहास कब तक पढ़ेंगे !

—डा० यशपाल जी शास्त्री

(गतांङ्क से आगे)

तीसरा षड्यन्त्र ऐतिहासिक विसंगतियाँ

अठारह सौ सत्तावन के स्वतन्त्रता संग्राम के समय अंग्रेज ने देखा कि इस देश का असली राष्ट्र जन हिन्दू है जो इस भूमि के कण-कण के लिए अपने प्राण विसर्जित करने का आकांक्षा रखता है। हिन्दु की इस नैसर्गिक भावना को तलवार के सहारे नहीं मिटाया जा सकता। इसको मिटाने के लिये कुछ भ्रम खड़े करने होंगे। हम इन भ्रमों को विसंगति के नाम से सम्बोधित करते हैं।

(क) पहली विसंगति—आर्यों का भारत में आगमन

९ अप्रैल १८६६ ई० को रायल एशियाटिक सोसायटी लन्दन की सभा में मिस्टर थामस ने एक विचार प्रस्तुत करते हुए कहा आर्य लोग आक्सस प्रान्त से ओरियाना में आए। वहीं से हिन्दूकुश तथा पंजाब में उतरे। वहीं सरस्वती नदी के किनारे वेदों की रचना हुई तथा वहीं से पूरे भारत में आर्यों का फैलाव हुवा।" वेदों के तथाकथित विद्वान् मैक्समूलर ने इस विचार का समर्थन किया और एक पग आगे बढ़ कर ई० पू० १५०० वर्ष को आर्यों के आगमन का समय निश्चित कर दिया।

इस षड्यन्त्र का उद्देश्य अंग्रेजी संस्कृति में दीक्षित भारतीयों के मस्तिष्क में यह बैठाना था कि अंग्रज जाति पराई नहीं है अपितु रक्त सम्बन्ध से अपने ही भाई हैं। कुछ पूर्वज भारत में आ गए थे और कुछ इंगलैण्ड की ओर चले गए थे। इस विसंगति का विरोध तत्कालीन हमारे विद्वानों ने नहीं किया अपितु हमारे भारतीय इतिहासकारों में इसे ब्रह्मवाक्य मान कर इसका अन्धानुकरण किया। यहाँ तक कि राष्ट्रवादी भावना से ओत-प्रोत तिलक महाराज ने भी लिख दिया कि आर्य लोग उत्तरी ध्रुव से आये थे।

पूर्वोक्त विसंगति को और भी अधिक घातक और विषैली बनाते हुए वार्थ-लोम्य हीगेलवर्ग ने इस नई विसंगति का सूत्र पात किया।

(ख) दूसरी विसंगति—आर्य अनार्य का सिद्धान्त

यह विसंगति भारतीयों को दो भिन्न समूहों में बाँटती हैं आर्य और अनार्य (द्रविड़) संस्कृति। इस विचार को डा० काल्डवेल तथा फादर वेलवी ने आगे बढ़ाया। इसी विष बेल को रेव्हरेण्ड जी० वी० पोप, ह्यू जेन हल्टज, ज्यूलेस

वाल्की, तथा फादर हेमरी ने सींचा। और इसी विष-बेल पर इतने लुभावने फूल फल लगे कि एक ओर तो उत्तर भारतीय, दक्षिण भारतीय, आदि वासी, गिरिजन, हरिजन, सवर्ण-अवर्ण आदि के भेदभाव खड़े हो गए। दूसरी ओर अपने को हिन्दू न कह कर आर्य बनने और कहलाने की षड्यन्त्री लालसा में हम अतिरेक की सीमा तक जा पहुँचे और स्वामी दयानन्द जैसे राष्ट्रवादी और वेदाभिमानी व्यक्ति भी अंग्रेजों की इस भूलभुलैया में फँस गये उन्होंने हिंदु शब्द को अपमान-जनक तथा आर्य को श्रेष्ठता वाचक घोषित कर दिया।

(ग) तीसरी विसंगति—द्रविड़ों को बरगलाना

इन दोषों विसंगतियों को जब हमारे तत्कालीन बुद्धिजीवी समाज ने बिना किसी प्रतिरोध के स्वीकार कर लिया तो अंग्रेजों को अपने षड्यन्त्र की सफलता पर विश्वास हो गया। अब आगे का कार्य सरल था। इन दोनों विसंगतियों के आधार पर भारत को हीनता के अन्ध कूप में ढकेलना प्रारम्भ किया गया। जब सिन्धु सभ्यता की खोज हुई और यह सभ्यता संसार की प्राचीनतम सभ्यता सिद्ध हुई तो षड्यन्त्री पुरातत्वविदों तथा इतिहासकारों के सामने एक समस्या खड़ी हो गई। अब वे क्या कहें कि आर्य कहाँ से आए! इस सभ्यता के जनक कौन थे? परन्तु उन्होंने एक युक्ति निकाल ही ली। उन्होंने घोषित कर दिया कि सिन्धु सभ्यता ईसा से दो हजार वर्ष प्राचीन है? और क्योंकि आर्य लोग भारत में १५०० ई० पू० आए थे अतः यह सभ्यता निश्चय ही द्रविड़ सभ्यता थी और इस को निश्चय ही निर्यमता पूर्वक आर्यों ने नष्ट किया था। मोहन जोदडो और हरप्पा के नगरों को शवरों के बताते हुवे, मार्टियर व्हीलर तथा स्टुअर्ट पिगट ने बताया कि वेदों के अनुसार इन्द्र ने शवरों के नगरों को नष्ट किया था इसी कारण उन्हें पुरन्दर कहा गया। और वे नगर यही नगर थे। कितना आश्चर्य है कि वेद विद्या से अनभिज्ञ इन दोनों महाशयों ने जो कहा वही हमारे भारतीय इतिहासकारों तथा पुरातत्व विदों ने आँख मून्द कर मान लिया। जब कि वेद कहता है कि शबर पर्वत निवासी थे "यः शंवरं पर्वतेषु क्षियन्तम्" (ऋग्वेद) और मोहन जोदडो एवं हरप्पा पर्वतों से बहुत दूर है।

(घ) चौथी विसंगति—भ्रान्ति का दुष्प्रचार

वैदिक काल में घटित दाशराज्ञ युद्ध को भी षड्यन्त्री इतिहासकारों ने आर्य-अनार्य युद्ध कह कर प्रचारित किया और हिन्दु राष्ट्र को विभाजित करने का प्रयास किया। जब कि सच्चाई यह है कि वैदिक काल में हरप्पा नगर का नाम हरयूपा अर्थात् शंकर शिव का यूप स्तम्भ था। यहाँ के निवासी वैदिक धर्मा-

वलम्बी थे। हरप्पा का राजा चायमान जब पड़ोसी राजा वरशिक्ष द्रुह्यु, यदु, आदि के आक्रमणों को न सह सका तो उसके भाई अम्यवर्तिन ने पांचाल नरेश सुदास पैंजवन को सहायतार्थ आमन्त्रित किया। दूसरी ओर थे अज, शिर्यगू, यक्ष, कवय श्रुत, अनु, द्रुह्यु, आसगप्लायोगी, यदु, पर्शु, तिरिदार वत्स तथा काय। यह शुद्ध रूप से दो वैदिक धर्मावलम्बी राजसमूहों में था, न कि आर्य अनार्य समूहों में।

(ङ) पांचवीं विसंगति –लिपि का अज्ञान

मुसलिम तथा पाश्चात्य इतिहासकारों ने बताया कि वैदिक लोग लिखना पढ़ना नहीं जानते थे और वेद विद्या श्रुति परम्परा से चली आ रही थी, परन्तु जब मोहन जोदडो तथा हरप्पा की खुदाई में लिखित मुद्राएँ और ब्राह्मी लिपि मिली तो उन लोगों के सामने एक समस्या फिर खड़ी हो गई! अब क्या कहें? तो कहा गया कि आर्यों ने पढ़ना लिखना अनार्यों से सीखा। ब्राह्मी लिपि अनार्यों की देन है। दुःख और आश्चर्य है कि हमारे समकालीन विद्वानों ने इसका कोई विरोध नहीं किया।

भला वेद जैसा विशाल साहित्य, क्या बिना किसी लिपि के सुरक्षित रह सकता था? संहिताएँ तो प्रयत्न पूर्वक कोई कण्ठ भी कर ले परन्तु शतपथ ब्राह्मण और अनेक उपनिषदों जसा गद्यमय विशाल साहित्य कैसे कण्ठस्थ किया जा सकता था? दूसरे ऋग्वेद में लेखन और तक्षण के स्पष्ट उल्लेख है। इन्द्र के लिये ऋचा को तक्षण करने का वर्णन है। (ऋ० १. ६२. १३) अथर्ववेद में लिख शब्द मिलता है (अजैनां त्वा संलिखितं संरुधाम) ऋग्वेद में अष्ट और सहस्र आदि शब्दों का वर्णन है सहस्रमे ददतो अष्ट कर्ण्यः (ऋ० १०. ६२. ७) लिखने के लिए सीसे की लेखनी होने का विधान वेद में है। यजुर्वेद में कई स्थानों पर वाचक शब्द आया है जिसका अर्थ ही सामने रखी लिखित वस्तु वाँचना होता हैं। "वाचक ददर्श वाचं अपरयत् यजु० १०. ७.-४) जुआरी के संख्या वाचक चिह्न ऋ० १. ४१. ९) तथा शतपथ में मन्त्राक्षरों की संख्या का उल्लेख है। यह सब यही सिद्ध करते हैं कि भारतीयों को लेखन विद्या आदि काल से ही ज्ञात थी।

(क्रमशः)

राजनीति-वर्णन

प्रो० श्री भोलादत्त जी ध्यानी एम. ए.

बरसत करषत ध्यानिकवि, भानुहिं लखै न कोइ।
हरषत लोग सुभाग ते, भूप भानु सम होइ ॥१॥

माली चतुर किसान सम, निपुन प्रजाप्रतिपाल ।
बड़े भाग कलिकाल में, कबहुं होइ महिपाल ॥२॥

भरतखंड में चाहिये, सासक खल दमनीय ।
कबहुं न छाड़े प्रान लगि, धरम-राम नय सीय ॥३॥

बिना काज बिनु बातहीं, निदरहि जे जनराज।
जैहैं बारह बाट ते, निहचै सम कुरुराज ॥४॥

निहचै जाके राज में, होहिं धरम अपमान ।
ताकी दसा विलोकिये, दसमुख कंस समान ॥५॥

परी बवंडर चंग ज्यों, विषयी-कर सुखसाज ।
धरम बिभव सुख नीति सब, होइहिं तस खलराज ॥६॥

अवसरवादी लोग जे, बात करहिं कर जोरि ।
बनैं सेर मत पाइकैं, हुकम देहिं बरजोरि ॥७॥

घर-घर दौरहिं जोरि कर, जबै समय मतदान ।
सासक बनि पाछै करैं, आछै विधि अपमान ॥८॥

कल-बल-छल सासक बनैं बहुविधिकै कर जोरि ।
बरसहि करषहिं प्रजाजन, बहुबिधि कै कर जोरि ॥९॥

उरग चाल सम कुटिल गति, राजनीति की चाल ।
याते जागे ही रहो, समझो चाल-कुचाल ॥१०॥

राजनीति के चक्र को, समझो मनुज सुजान ।
देस-धर्म रच्छा करो, तजि आलस्य गुमान ॥११॥

सरिता के कुतर्कों का उत्तर

—वाणीभूषण, आचार्य श्री पं० रामचन्द्र जी शास्त्री

(गतांक से आगे)

शङ्का—सीताहरण के बाद राम अत्यन्त दुःखी थे। नारद जी ऐसे में राम के पास गए। तुलसी के शब्दों में—नाना विधि विनती करि प्रभु प्रसन्न जिय जानि। नारद बोले वचन तब जोरि सरोरुह पानि॥ सुनहु उदार सहज रघुनायक। सुन्दर अगम सुगम वरदायक॥ देहु एक वर मांगहुँ स्वामी। जद्यपि जानत अन्तरजामी॥ राम ने कहा—जानहुमुनितुम्ह मोर सुभाऊ। जन सन कबहुंकि करउँ दुराऊ॥ कवन वस्तु अस प्रिय मोहि लागी। जो मुनिवर न सकहु तुम्ह माँगी॥ जन कहुँ कछु अदेय नहिं मोरे। अस विस्वास तजहु जनि भोरे॥ तब नारद बोले हरषाई। अस वर मांगउं करउं ढिठाई॥ जद्यपि प्रभु के नाम अनेका। श्रुति कह अधिक एक ते एका॥ राम सकल नामन्ह ते अधिका। होउ नाथ अघ खगगन वधिका॥ राका रजनी भगति तव राम नाम सोइ सोम। अपर नाम उडुगन विमल बसहु भगत उर व्योम॥ एवमस्तु मुनि सन कहेउ कृपा सिन्धु रघुनाथ। तब नारद मन हरष अति प्रभु पद नायहु माथ॥ अर० कां० पृष्ठ ६४७।

इस से बड़ी खुशामद और आत्म प्रशंसा का प्रसंग शायद ही कहीं मिले। नारद ने कितनी भूमिका बाँधी पर वर क्या मांगा, आप के बहुत से नाम हैं जो एक से एक बढ़ कर हैं लेकिन राम नाम उन सब नामों से अधिक है।

बेशर्मी की हद हो गई, जब राम ने इस पर अपनी स्वीकृति की मुहर लगा दी। किसी दूसरे के सामने यह प्रस्ताव रख कर स्वीकृति ली जाती, तब ठीक था। वास्तविकता यह लगती है कि तुलसी अपने उपास्य राम का नाम सब से महत्वपूर्ण बताना चाहते थे। उसके लिये तुलसी ने यह प्रसंग चुना। हम पूछना चाहते हैं कि क्या इस बात के लिये यह प्रसंग उचित था? क्या इस से राम की प्रतिष्ठा कम नहीं होती?

समाधान—भक्त और भगवान् के संवाद को विवाद का रूप देना और उस में खुशामद तथा आत्म प्रशंसा का भ्रम होना, यह सब सत्संग के अभाव का फल है। स्तुति तथा खुशामद में अन्तर होता है। इसी प्रकार यथार्थवाद और आत्म प्रशंसा में भी फर्क होता है। अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिये किसी के दोष को गुण के रूप में वर्णन करना एवं थोड़े से गुण को बहुत बढ़ा-चढ़ा कर कहना खुशामद कहलाती है, परन्तु गुणों के यथार्थ वर्णन को स्तुति कहते हैं। लोकैषणा

के लालच में अपनी तारीफों के पुल बाँधते चले जाना आत्म प्रशंसा मानी जाती है। चाहे उस में सत्य का पुट हो या न हो, किन्तु प्रसंगवश अपना ठीक-ठीक परिचय देना तो यथार्थवाद है। अतः इस प्रकरण में खुशामद और आत्म प्रशंसा की कोई बात ही नहीं है। नारद जी ने यहाँ पर भगवान् राम की स्तुति की है और प्रभु रामचन्द्र जी ने उन्हें अपने स्वभाव तथा स्वरूप का ठीक-ठीक परिचय दिया है, किन्तु पूर्वाग्रही शङ्कालु की बुद्धि में सन्त तुलसीदास, देवर्षि नारद और भगवान् राम के प्रति द्वेष भाव अपना काम कर रहा है। क्या भगवान् राम में उदारता, सौन्दर्य, वर देने का सामर्थ्य, अन्तर्यामित्व आदि सद्गुण नहीं हैं? इसी प्रकार श्रीराम भक्तजनों से अपने को एवं अपनी किसी बात को नहीं छिपाते, भक्तों के लिये वे कुछ भी अदेय नहीं समझते, इस में उन्होंने कौन सी बात बढ़ा-चढ़ा कर बता दी? नारद जी द्वारा राम नाम की महिमा अधिक बताने का मर्म भी समझ लेना चाहिये। विष्णु भगवान् ने प्रायश्चित्त के लिये नारद जी को शिवजी के सौ नाम जपने के लिये कहा था—

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे।
सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने॥ (पद्म. पाताल खण्ड)।
सहस नाम सम सुनि सिव बानी।
जपति सदा पियसंग भवानी॥ (१।१८।३)।

नारद जी ने यह भी सोचा कि मेरे शाप को स्वीकार करके विष्णु, राम बन गए, वे चाहते तो शाप को टाल भी सकते थे, परन्तु उन्होंने मेरा सम्मान रख लिया। राम नाम की महिमा के साथ-साथ मेरा नाम भी अमर हो जाएगा। अतः नारद जी ने प्रभु राम से यह वर मांग लिया।

अन्य नामों से राम नाम में यह विशेषता भी है कि इसे सीधा जपो या उल्टा किन्तु मुख से राम नाम ही निकलेगा।

उल्टा नाम जपत जग जाना। बाल्मीकि भए ब्रह्म समाना॥

वस्तुतः नारद जैसे सन्त ने वर लेने की आड़ में राम को आशीर्वाद ही दिया है। नारद जी ने राम के रूप को शाप दिया तो उसके प्रायश्चित्त में नाम का गौरव भी बढ़ाया।

श्रीरामचन्द्र जी ने परशुराम जी से कहा कि मेरा राम नाम तो दो अक्षरों वाला छोटा सा है, परन्तु आप का परशुराम नाम पांच अक्षरों वाला बड़ा है।

राम मात्र लघु नाम हमारा। परसु सहित बड़ नाम तोहारा॥ (१।२८२।३)।

नारद जी ने विचार किया कि कहीं लोग परशुराम का नाम न जपने लग जाएं, अतः कहा कि—

(शेष ३२ पृष्ठ पर)

श्री सनातन धर्म दिग्विजय मण्डल द्वारा धर्म प्रचार

वैशाली (बिहार) लिच्छवी गणराज्य की राजधानी एवं तीर्थंङ्कर महावीर स्वामी की जन्मभूमि के रूप में विख्यात इस ऐतिहासिक नगरी में प्रति वर्ष की भाँति अखिल भारतीय विराट् मानस सम्मेलन शारदापीठ तथा ज्योतिष्पीठ के जगद्गुरुशङ्कराचार्य अनन्त श्री स्वामी स्वरूपानन्द जी सरस्वती महाराज की तत्त्वावधानता में सम्पन्न हुआ। जिसमें लक्ष्मण किलाधीश श्री सीताराम-शरण जी शास्त्रार्थ केसरी डा० वीराचार्य शास्त्री एम. ए., पीएच. डी., शास्त्रार्थ पञ्चानन प्रेमाचार्य शास्त्री एम ए, श्री शीतल प्रसाद जी व्यास, श्री मानस प्रपन्न जी, श्री मानस कोकिल जी, श्री स्वामी व्यासदेवाचार्य जी आदि महानुभावों ने भाग लिया। सुदूर ग्रामीण अञ्चल के हजारों धर्मानुरागी श्रोता प्रातः ११ बजे से रात्री १२ बजे तक अनवरत चलने वाले ज्ञान यज्ञ में भाग लेते थे। इसका सर्वाधिक श्रेय श्री सुरेश प्रसाद सिंह जी प्रखण्ड विकास अधिकारी महोदय को जाता है। जिनकी आस्तिकता विनम्रता, उदारता, सरलता एवं अनुशासन प्रियता सभी के लिये सतत प्रेरणा का अजस्र स्रोत रहती है। आपने लोकालोक की आजीवन सदस्यता भी ग्रहण की जिसके लिये वे साधुवाद के पात्र हैं। श्री शिव-प्रसाद जी माधोपुरी, श्रीराम निरञ्जन प्रसाद जी द्विवेदी, श्री राम धनी प्रसाद जी एवं श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिंह जी की व्यवस्था स्तुत्य रही।

बालोतरा (राजस्थान) भारत पाक सीमान्तवर्ती बाड़मेर जिले के इस औद्योगिक नगर में महायज्ञ आयोजक महन्त श्री स्वामी भरतदास जी आचार्य महाराज की तत्त्वावधानता का तीसवाँ लक्ष्मीनारायण महायज्ञ धूमधाम से सम्पन्न हुआ। जिसमें शास्त्रार्थ केसरी डा० वीराचार्य शास्त्री के सैद्धान्तिक तथा भक्तिभावना पूर्ण प्रवचनों से जनता ने धर्म लाभ प्राप्त किया। श्रीमद्भागवत की कथा श्री पं० दयाशङ्कर जी शास्त्री के द्वारा सम्पन्न हुई। श्री सन्त राम-किशोर दास जी महाराज, श्री देवी वीणापाणी जी, श्री शैलेन्द्र मुनि जी, आचार्य सुधाकर जी व्यास मानस-राकेश के साथ-साथ श्री लालता प्रसाद जी वेदान्ती एवं श्री बालकृष्ण जी शास्त्री ने भी भाग लिया। महायज्ञ समिति के अध्यक्ष श्री जुगलकिशोर जी गोयल सी. ए., श्री सत्यनारायण जी गौड़, श्री मोहन लाल जी सिंहल, श्री मूलचन्द जी अग्रवाल तथा बद्री प्रसाद जी प्रभृति

पदाधिकारियों एवं सभी सदस्यों का सेवा भाव, व्यवस्था कार्य एवं सौजन्य प्रशंसनीय रहा। बारहवीं शताब्दी में निर्मित श्री रणछोड़ राय जी के दर्शनों का लाभ भी इस यात्रा में मिला।

दिल्ली—श्रीमती सोना देवी जी (धर्म पत्नी वैकुण्ठवासी शास्त्रार्थ महारथी श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्री) की सन्निधि में उनके प्रपौत्र (पौत्र-डा० वीराचार्य शास्त्री एवं पुत्र श्री अरुणेश कौशिक) चि. वरुणेश के जन्मोपलक्ष्य में श्री राम चरित मानस का अखण्ड पाठ एवं तदीयाराधन (प्रीतिभोज) का सात्त्विक कार्यक्रम धर्मधाम तथा गीताभवन के विशाल प्रांगण में आनन्द पूर्वक सम्पन्न हुआ। जिसमें स्थानीय एवं बाहर के अनेक गण्य-मान्य महानुभावों ने नवजात शिशु को अपने माङ्गलिक आशीर्वाद से आप्यायित किया। धर्मालङ्कार श्री प्रकाश चन्द जी शास्त्री (आलमपुर-दतिया) ने कृपापूर्वक शुभाशंसा प्रेषित करते हुए लिखा है—

(क) अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनूमांश्च विभीषणः।
कृपः परशुरामश्च रक्षन्तु वरुणं सदा ॥
(ख) सुखद प्रगति अरु लोकप्रिय, नहीं गर्व लवलेश।
मेधावी, कमनीय प्रभो ! हों शतायु वरुणेश ॥

हम अत्यन्त विनम्रता के साथ सभी के प्रति आभार व्यक्त करते हैं। शमिति।

(३० पृष्ठ का शेषांश)

राम सकल नामन्ह ते अधिका। होउ नाथ अघ खग गन बधिका ॥ (३।४१।४)।

उदार शिरोमणि श्रीराम ने अपने भक्त नारद के भाव को पूर्ण करने के लिये वर देकर भक्तवत्सलता का परिचय दिया तो प्रश्न कर्ता को बेशर्मी की सूझ गई। वे अपनी बेशर्मी को अपने तक ही सीमित रखते तो उचित था। पर वे बेशर्मी की सीमा ही पार कर गए। इस में किसी अन्य से स्वीकृति लेने की क्या आवश्यकता थी ?

यदि तुलसीदास जी अपने उपास्य राम के नाम को सब से महत्वपूर्ण बताना चाहते थे तो इस में भी किसी को आपत्ति क्यों ? एवं पेट में पीड़ा क्यों ? कोई आदर्श पतिव्रता देवी अपने पति देव को सब से महत्वपूर्ण स्थान देती है इस में किसी बुद्धिमान् पुरुष को क्या आपत्ति हो सकती है ?

इस प्रसंग के औचित्य पर प्रश्न चिह्न लगाना समझदारी नहीं मानी जा सकती। इस से भगवान् राम की प्रतिष्ठा में कमी की कल्पना करना भी गलत बुद्धि की उपज मानी जाएगी। (क्रमशः)

हमारा मननीय-साहित्य

अथर्ववेद संहिता (मूल)	६०.००	ब्रह्मापुत्री	१.००
हिन्दी भाष्य)		पुराणों के परब्रह्म कृष्ण	२.००
अथर्व वेद भाग-१	५०.००	शास्त्रार्थ-महारथी	५.००
,, निभाग-२	५०.००	सार्वभौम हिन्दू	१०.००
,, भाग-३	५०.००	काशी-शास्त्रार्थ	४.००
,, भाग-४	५०.००	शंका समाधानांक	५.००
यजुर्वेद भाग-१	५०-००	शास्त्रार्थ पंचक	५.००
,, भाग २	५०-००	चार शास्त्रार्थ	५.००
वेद दिग्दर्शन	१२.००	लबड़ धौं धौं	२.००
सनातन संस्कारविधि	१६.००	आंख का शहतीर	१.००
वेदामृत	७.००	परतत्त्व समीक्षा	२.००
अन्त्येष्टि संस्कार विधि	५.००	शल्यो जेष्यति पाण्डवान्	२.००
संध्या-तर्पण-नित्यकर्म विधि	२.००	पराजय पंचक	.५०
क्यों (पूर्वार्द्ध)	२५.००	शास्त्रार्थ राज धनवार	.५०
क्यों (उत्तरार्द्ध)	३०.००	दृष्टान्त दिग्दर्शन	२०.००
सनातन धर्म	५.००	मन्त्रालोक	
शिखासूत्र	२.००	प्रेरक कथाएं	
हमारे पर्व-त्यौहार	५.००	विविध-रामायण	
श्रीगणेश	२.००	मर्यादा पुरुषोत्तम राम	५.००
श्राद्धविज्ञान	५.५०	श्री राम वचन सुधा	५.००
मूर्तिपूजा विज्ञान	५.००	गृहलक्ष्मी	
उपासना रहस्य	२.००	अमृत-कलश	२.००
विवाह विज्ञान	२.००	कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्	१.००
ॐकार शिवलिङ्ग	२.००	गंगा-लहरी	१.००
हिन्दू और हिन्दूराष्ट्र	५.००	अमृत-लहरी	१.००
पुराण दिग्दर्शन	२०.००	धर्म-शिक्षा भाग-२	१.००
पुराणदिग्दर्शन (परिशिष्ट)	५.००	लोकालोक (मासिक पत्र)	
राधाकृष्ण	२.००	वार्षिक मूल्य-	१५.००
रासलीला	२.००	पुस्तक विक्रेताओं को उचित सुविधाएं	
चीरहरण	.५०	प्रदान की जाती हैं।	

माधव पुस्तकालय
१०३-ए, कमला नगर, दिल्ली-११०००७.

पदाधिकारियों

LOKALOK DECMBER 1984 No. D(DN) 211

श्री सनातन धर्म दिग्विजय मंडल के तत्त्वावधान में

हमारी धार्मिक सेवायें

- अपने धार्मिक उत्सवों को सफल बनाने के लिए सनातन धर्म के सैद्धान्तिक प्रवचनों के लिए उच्चकोटि के महोपदेशक एवं भजनोपदेशक मंगवाइये।
- सब प्रकार के संस्कार, यज्ञ, श्रीमद्भागवत हरिवंशपुराण, शिवपुराण आदि के व्याख्या सहित पारायण तथा अनुष्ठान सम्पन्न कराने के लिए सुयोग्य विद्वान् आचार्य और कर्मकाण्डी वेदपाठियों के निमित्त पत्र लिखें।
- धार्मिक सामाजिक एवं राष्ट्रीय कर्त्तव्य जानने के लिए हमारा मासिक पत्र पढ़िये। वार्षिक मूल्य १५) एक प्रति १.५० पैसे।
- सनातन धर्म का वैज्ञानिक रहस्य जानने के लिए हमारा उपादेय मननीय साहित्य पढ़िये।

माधव पुस्तकालय १०३-ए, कमला नगर दिल्ली-११०००७

सम्पादक, प्र० मु०— , धर्म प्रेस, कमला नगर दिल्ली-११०००७